दहलीज पर न्याय

चंद्रकांता

दहलीज पर न्याय

धूप बहुत तेज थी। सीधी, नुकीली बर्छियों-सी कपाल के ऊपर गिरती। लगता था, अभी यह साबुत सिर कई हिस्सों में बँटकर टुकड़ा-टुकड़ा हो जाएगा। रुक्की ने माथे पर हथेली की ओट दे मिचमिचाती आँखों से दूर तक नजर डाली। क्षितिज पर फैला रेतीला मैदान। बीच-बीच में रेत के ढूह और इक्का-दुक्का करील बबूल के ठिंगने झाड़, जिनके पत्ते बकरियाँ चर गई थी और टहनियों के कँटीले ठूँठ बाकी रह गए थे। वहाँ तक

हाँफती-गिरती रुक्की पहुँच भी जाए तो भी कोई फायदा नहीं। झाड़ न उसे छाँह दे सकता था और न सुरक्षा।

छाती से चिपकी गठरी का मुँह उसने थोड़ा-सा खोलकर देखा। बच्चा पसीने से सराबोर बेहद गर्मी और प्यास के मारे अधमरा-सा सुन्न पड़ा था। लिजलिजे मांसपिंड की बेहरकत गठरी, ज्यों किसी ने नन्हें जिस्म से साँस खींच ली हो। रुक्की ने घबराकर ओढ़नी के पल्लू से बच्चे को हवा दी। नहीं, बच्चा जिंदा था। उसकी बारीक-बारीक साँसें उठ-गिर रही थीं। उसके डूबते जी में आस जगी। बच्चे के आँख खोलते ही उसने अपनी छातियाँ उसके मुँह में दीं। बच्चे ने एक बार अभ्यासवश स्तनों पर मुँह मारा, पर तुरंत ही बिदककर एक झटके से मुँह हटा दिया। रुक्की ने सोचा, दूध की धार उसके जंपर को भिगो रही होगी, लेकिन ऐसा कुछ भी न था। तीन दिन की भूख-प्यास से उसके रंगों को खुश्क कर दिया था। दूसरी बार कोशिश करने पर भी बच्चा दूध खींच न सका और ऊब और प्यास के मारे इयाँ-याँ करके चीखने लगा। चीख से घबराकर दाएँ-बाएँ देखती वह बच्चे को बाँहों में झुलाने लगी। बच्चा थोड़ा चुप हुआ, पर इस बार उसकी अपनी चीख निकल गई। धरती पर रेंगते जाने किस जीव ने उसके पैर में जोर का डंक मारा था। घबराहट और दर्द से रुआँसी उसने ओढ़नी का किनारा फाड़ टखनों के पास कसकर बाँध दिया। क्या जाने कौन जहरीला कीड़ा था। आस-पास रेंगता कुछ नजर तो न आया। पीड़ा से उसकी आँखों में आँसू आ गए, लेकिन दूर-दूर तक रेत के लहरिये सागर के सिवा कोई उसके आँसू देखने वाला नहीं था। हवा भी ज्यों दम साधे, चोरनी-सी कहीं छिपी बैठी थी।

कहने को तीन दिन, पर लगता था, महीनों हो गए उसे भागते हुए-भेड़ियों, भालुओं और मैल खाते सुअरों से बचते हुए। आदमी की अक्ल में आदमखोर हैवानों से उसका पाला पड़ा था। घर-द्वार की सुरक्षा छोड़कर जो नंगे आसमान के नीचे आ गई थी। यह सब हुआ था उस पापी महंत के कारण। उसकी भी तो मत मारी गई थी। कैसी भागी-भागी गई थी छोरे कोलेकर महंत की असीस लेने। सत्यानाशी महंत ने कैसे सख्त अवाज में उसे सरापा था। सरापा ही तो, असीस थोड़े दी। बच्चे को घूरते हुए ठस-बेलौस आवाज में रुक्की से कहा था - 'देवी माँ को तेरे इस छोरे की जरूरत है।' उसकी ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे रह गई थी। महंत उसके सिर-कंधों पर हाथ फेरता उसे वरदान-सा देता बोला था - 'इसकी बलि देगी तो दस गबरू जनेगी। अभी तो तू जवान है। देवी माँ उसके सपने में आई थी।' ऐसा ही कुछ उसने आगे कहा था। लेकिन रुक्की ने आगे की बात नहीं सुनी। उसकी देह तो देह, आत्मा तक काँप उठी थी।

काकी माँ का आग्रह था - 'पूरे पाँच साल बाद कोख हरी हुई है राधे की बहू! छोरे को महंत के पास ले जा। माथे पर हाथ फेर देगा।' घर आकर वह चुप्प-गूँगी हो गई थी। पर गाँव-भर में दबी-दबी आवाजें उभरने लगी थी, महंत की बात! रुक्की के छोरे को देवी की बलि चढ़ाएँगे।' राधे बैलों को सानी खिलाते पत्थर हो गया था। महीना भर के छोरे की बलि? क्यों भला? नहीं, उसे नहीं चाहिए दस-दस गबरू। उसका एक ही छोरा भत्तेरा। रुक्की के पेट में चीरा लगाकर छोरा जन्मा है। डॉक्टरनी कह गई थी दूसरा बच्चा नहीं होगा। उसने महंत जी के पास जाकर डॉक्टरनी की बात कही थी। महंत की आँखें सुर्ख अंगार हो गई थी। यह उसकी सत्ता को चुनौती थी। वह दाँत पीसकर बोला था - 'डॉक्टरनी देवी से ज्यादा जानती है? बच्चे की उम्र एक माह एक दिन लिख गई है धर्मराज के बहीखाते में। इसे पत्थर की लीक समझो! इस छोरे की बलि देगी तो दस बेटे जनेगी, सात पुरखे तरेंगे, नहीं तो यह छोरा जनकर भी उम्र-भर बाँझ की बाँझ रहेगी।'

धन्नो, लक्ष्मी, बुधुआ, हरि काका आगत की आशंका सूँघ उस गुस्से की लपट में भस्म होते-होते रह गए थे। ऐसा आतंक था महंत का गाँव में। राधे समझाते, पाँव पकड़ते हार गया, लेकिन महंत का दिल न पसीजा। गाँव के बड़े-बूढ़े भी प्रकारांतर से महंत की बात का समर्थन करने लगे थे।

महंत की बात कभी झूठी निकली? अनारो की, ब्याह के दस साल बाद कोख हरी नहीं हुई? महंत का प्रताप नहीं था वह? कुल आठ दिन ही तो जाप करवाया था उससे! सूरज उगने से पहले! बिल्लो की नानी मरी नहीं थी देवी का अमृत पीने से? पापिन जो थी जन्म-जन्म की। महंत जी ने क्या झूठ कहा था?

रुक्की किसी को न समझा सकी। राधे जान गया कि महंत अपनी जिद पूरी करवा के रहेगा। कितने तो गुंडे-बदमाश पाल रखे हैं! देवी के नाम पर उसका बच्चा बलि चढ़ेगा और वह अपनी आँखों से यह अत्याचार न देख पाएगा। राधे उसी दिन गाँव छोड़कर भाग गया।

रुक्की अकेली पड़ गई। लेकिन रुक्की जब्बर औरत है। उसने जिद पकड़ ली। वह इस नन्हीं जान को जिंदगी देगी। वह न्याय के दरवाजे खटखटाएगी। रुक्की कमजोर नहीं पड़ेगी। वह इस महंत के बच्चे से निबट लेगी। सारा कच्चा चिट्ठा खोलकर रख देगी पुलिस-दरोगा के सामने।

काँपते हुए घुटनों पर हाथ का भार डाल रुक्की ने उठने की कोशिश की। आस-पास कहीं कोई कूल-किनारा नहीं। धड़ती अकड़े हुए चमड़े-सी सख्त और बेदर्द। आँखों के

कोए बेअंत जलन से लहकते-से। गल्ले का थूक भी सूख गया था। ताल अनावृष्टि के शिकार किसी तालाब के सूखे दरार-भरे तल की तरह फूटने को आ रहा था।

नहीं, इस तरह धूप में बैठकर झुलसने नहीं चलेगा। शरीर में आखिरी साँस रहते उसे चलना होगा। रीढ़ की हड्डी तक सनसनाती पैर की पीर को झटक वह सीत्कार दबाती उठ खड़ी हुई। एक पाँव को लिथड़ती, गिरती-पड़ती रुक्की धूप ढलने तक पेड़ों के झुरमुट तक पहुँच गई, जिनकी छाँह तले पक्के कुएँ की जगत नजर आ रही थी। पास ही कहीं गाँव होगा। इक्का-दुक्का झुग्गी भी नजर के घेरे में आने लगी थी।

कुएँ में पानी बहुत नीचे था। पानी खींचने के डोल की जगह केवल एक मोटा रस्सा लटक रहा था। डोल शायद निकाल दिया गया हो। आस-पास कोई बर्तन-भांडा, कोई टिन का डिब्बा भी नजर नहीं आया।

क्या करे रुक्की? पास की झुग्गी का द्वार खटखटाए? कोई पहचान वाला निकला तो? अहं! इस दूर के गाँव में कौन पहचानेगा उसे?

कोई पूछे, कौन हो, कहाँ से आई हो? ऐसी अधमरी हालत कैसे हो गई? प्रश्न पूछने का पारंपरिक अभ्यास क्या यहाँ वालों को छूट गया होगा? लेकिन प्रश्नों से रुक्की डर गई तो घर से निकलने का अर्थ ही क्या हुआ?

रुक्की पाँव घसीटते झुग्गी के पास पहुँच गई। दरवाजे पर हल्की थाप दी। लकड़ी के भारी फट्टे खोल चारखाने वाली लुंगी पहने अधेड़ उम्र का पहलवाननुमा व्यक्ति उसके सामने खड़ा हो गया और प्रश्नात्मक मुद्रा बनाकर उसे घूरने लगा।

"थोड़ा पानी मिलेगा?" रुक्की ने भेदक दृष्टि को नजरअंदाज कर याचना-भरे स्वर में पूछा।

"कौन हो तुम? कहाँ से आई हो? इस गाँव की तो नहीं लगती? यह कपड़े में क्या लिपटा रखा है?"

रुक्की प्रश्नों की बौछार से घायल-सी दरवाजे के पास लिपी हुई बरामदेनुमा जगह पर धम्म से बैठ गई।

"दूर से आई हूँ। प्यास से गला सूख रहा है। बच्चा भी प्यास से बेहोश है...।"

"कौन है...! किससे बतिया रहे हो?" महीन से मर्दाना स्वर में किसी स्त्री ने जवाबतलबी की।

"कौनौ औरत है। लगता है, कहीं से बच्चा उठाकर भाग आई है।"

लुंगीधारी ने उसकी तरफ घूरकर अंदर की ओर बात उगल दी। तब तक भीतर वाली औरत पाँव के भारी कड़े खनखाती, आटे सने हाथ लिए दरवाजे तक आ गई। रुक्की को ऊपर से नीचे तक परखते उसने भी प्रश्न ही किया, "क्या है? इस तरह यहाँ क्यों बैठी हो? कौन हो?"

"दूर से आई हूँ। थोड़ा पानी मिले तो चल दूँगी।" रुक्की की आवाज भर्रा गई।

"पर जा कहाँ रही हो और कहाँ से आई हो?" लुंगीधारी बार-बार खोद-खोदकर प्रश्न पूछे जा रहा था। इस बार उसकी औरत ने हाथ के इशारे से उसे बात करने से बरज दिया।

"आओ, भीतर चली आओ। अंदर बैठकर बात करो।"

नारी-मन की सहज संवेदना शायद बच्चे को देखकर जग गई थी।

पानी की घड़वी लाकर उसने रुक्की के हाथ में दी थी। उसने लोटे से धार बनाकर पानी हलक में डाल दिया। मुँह में धूल और रेत का किरकिरा स्वाद महसूस करते भी उसने गटागट पानी पी लिया। पानी की धार उसकी चोली भिगोती बच्चे के ऊपर पड़ी तो बच्चा कुनमुनाया। रुक्की ने हथेली की ओक बनाकर बच्चे को पानी पिलाया। वह जल्दी-जल्दी अपने नन्हें लाल कोंपलों-से ओंठ-जीभ चलाता पानी गुटकने लगा। जल्दी से उसे धसका लगा, तो रुक्की ने उसे थोड़ा झुककर पीठ पर दो-तीन थपकियाँ दी। बच्चे की नाक-आँख से पानी निकल आया और वह बिटर-बिटर आस-पास देखने लगा।

स्त्री उसे पानी पर टूटते देख समझ गई कि यह औरत प्यासी ही नहीं, भूखी भी है। भीतर जाकर उसने एक अधमैले-से कपड़े में लिपटी बाजरे की रोटी निकाली और उस पर थोड़ा-सा बथुए का साग रखकर सामने धर दिया।

"इसे खा लो, फिर अपनी बात बोलो।"

रुक्की जब रोटी खा रही थी तो दो-तीन नाक सुड़कते कमर तक नंगे लड़के दरवाजे के पास खड़े होकर कौतुक से उसे देख रहे थे, जो शायद इस औरत के बच्चे थे। रुक्की जल्दी-जल्दी रोटी गली में ठूँस रही थी और उसे धसके पर धसका उठ रहा था। स्त्री घुटनों पर ठोढ़ी टिकाए कुछ सोचती-सी उसे देख रही थी। रोटी खाते ही रुक्की ने चोली

ऊपर उठाकर बच्चे को दूध पिलाना शुरू कर दिया था, पर बच्चा किसी भी तरह दूध खींचने को राजी नहीं हो पा रहा था।

"इसे लू लग गई है शायद!" स्त्री ने पास जाकर बच्चे को देखा, फिर रुक्की की छातियाँ देखी और अनुभवी लहजे में बोली, "दूध की रगें सूख गई हैं, तभी बच्चे का तालू चटक गया है सूखे स्तन खींचते। मैं दाल का पानी देती हूँ, उसे पीकर थोड़ी बुहारी करो झुककर, दूध उतर जाएगा। घबराने की कोई बात नहीं।"

स्त्री ने बच्चे की ओर हाथ बढ़ाकर उसे अपने पास लेना चाहा। "लाओ, इसे दो, थोड़ा दूध पिलाऊँगी इसे।"

रुक्की ने एकदम बच्चे को अपने से भींच लिया, "नहीं, नहीं, वह बाहर का दूध नहीं पीता। वह... थोड़ा घबरा गया है गर्मी से। पानी पीने से ठीक हो जाएगा।" रुक्की ने दुबारा ओढ़नी का सिरा गीला किया और बच्चे के सिर-मुँह पर फेरा। बच्चे को वह अपने से अलग नहीं करना चाहती थी।

स्त्री ने तब थोड़ा गुड़ मिला पानी लाकर दिया जिसे बच्चा चटक-चटक आवाज निकालकर पीने लगा। रुक्की के पैर में बंधी पट्टी देख स्त्री ने उसका पैर देखा। दर्द से नीला पड़ गया था। भीतर जाकर उसने कोई तेल-जैसी दवाई निकाली। चाकू से खुरचकर डंक निकाला और डंक की जगह हथेली से तेल रगड़ दिया।

"ठीक हो जाएगा, कोई बिच्छू-इच्छू काट गया लग रहा है। यों ज्यादा जहरीला नहीं दिखता।"

स्त्री की सहानुभूति से रुक्की भावोद्रेक से फफककर रोने लगी। 'कौन है यह अनजान स्त्री? क्या लगती है उसकी? उसकी माँ तो नहीं आई इस स्त्री का रूप धरकर?'

लुंगीधारी खटिया पर बैठा रुक्की को बुरी तरह से घूरे जा रहा था। उसे रुक्की पर तरह-तरह के शक-शुबहे हो रहे थे। कई रंगों की कढ़ाईदार चोली पहनी है राँड़ ने। खूब से चुन्नटवाला चटख रंग का घाघरा। किसी खाते-पीते घर की लगती है। क्या पता, कहीं चोरी-चकारी की हो, या किसी यार के साथ चोरी-छिपे घर से निकल आई हो, और वह इसे गच्चा देकर भाग गया हो, अब यह पुलिस के डर से भाग रही हो...।

उसने पत्नी से कहा, "इसे जल्दी से रफा-दफा कर दो। कहीं हम भी पुलिस की लपेट में न आ जाए।"

पुलिस के नाम से स्त्री को थोड़ा डर जरूर लगा, पर रुक्की को रफा-दफा करने से पहले उसने उसकी कहानी सुनी। रुक्की पर अविश्वास करने का कोई कारण उसे नजर न आया। कनपटी के पीछे, बालों को खुजलाते उसने पूछा, "गाँव छोड़कर आई सो ठीक किया, पर अब जाओगी कहाँ?"

रुक्की अब सस्वर रुदन करने लगी।

"क्या कोई नहीं है तुम्हारी माँ के घर?"

रुक्की ने सिर हिलाकर नकारात्मक संकेत में उत्तर दिया।

"नाते-रिश्तेदार?"

"न, उनके पास नहीं जाऊँगी।"

स्त्री ने लंबी उसाँस भरकर झुग्गी के एक कोने की तरफ इशारा किया, "उधर पड़ी रहो रात भर। सुथरी जगह है। अभी खाट लेने जाऊँगी तो चार जने पूछने लगेंगे। सो जा, थक गई है, बाकी कल देखेंगे।"

रुक्की कोने में जाकर अँधेरे में धँस गई। यहाँ उसे बड़ा सुकून मिला। लुंगीधारी की नजरें उसे यहाँ से देख नहीं पा रही थी, हालाँकि वह उन्हें अपने समूचे जिस्म पर रेंगते महसूस करती भीतर-ही-भीतर घिन्नाने लगी थी।

बच्चा थक-चुककर निढाल सो गया था। उसने भी आँखें बंद कर ली। लेकिन बंद आँखों के आगे उसे हौलनाक दृश्य धमकाने लगे।

जलती मशालों-सी लाल आँखें, उसका मांस नोचने को आतुर लंबे धारदार बघनखे झुग्गी के कोने-कोने से धमकाने लगे। वह सोई थी या जागी थी, उसे कुछ पता नहीं चला। एक बेअंत दौड़ में वह हाँफ रही थी। कभी हरि काका का द्वार खटखटाती, कभी धन्नो बुआ की देहरी लाँघती, बदहवास, रोती-गिड़गिड़ाती, बंदरिया के मरे हुए बच्चे की तरह बच्चे को सीने से चिपकाए। लेकिन यह क्या? हरि काका पत्थर के बेजान बुत बन गए थे। काकी की आँखों से धार बनकर आँसू बह रहे थे। सदियों से बहाए औरत के आँसू। लेकिन उसकी जुबान बंद थी, होंठ सिले हुए।

वह बावली-सी पूरे गाँव में चीखती रही; परंतु गाँव एकदम सुनसान जंगल बन गया था, जहाँ उसकी चीखें हवा में गूँजती उस तक वापस लौट आई थी।

महंत की बात! हाँ महंत की बात टाली नहीं जा सकती थी। कुछ अंधविश्वास, कुछ वहम, कुछ लाचारी। देखा नहीं था तुमने बनवारी को बरगद की डाल पर लटकते? तब से किसी ने हिम्मत की महंत की बात टालने की? लाजों की लाश नहीं मिली थी कुएँ में? महंत को दुराचारी कहा था उसने! रुक्की की कोख से जरूर किसी नाग ने जन्म लिया है, नहीं तो महंत को क्यों ऐसा सपना आता? महंत देवी का भक्त है। देवी जो आदेश देगी, वह करके ही रहेगा। रुक्की-राधे की मर्जी होने-न-होने से क्या फर्क पड़ता है?

विरोध की शक्ति उनमें भी नहीं थी जो इस, खेत से उस खेत में पानी की धार कटने-बहने पर सिर फुटौवल करते थे, और जरा-जरा-सी बातों पर मरने-मारने पर उतारू हुआ करते थे।

लेकिन रुक्की अड़ गई। यह रुक्की का अपना मामला है। उसे नहीं चाहिए दस संतानें। वह अपने छोरे को नहीं देगी। महंत क्या, आप देवी भी आकर माँग ले, तो भी नहीं। रुक्की फरियाद करेगी। पुलिस-चौकी पर रपट लिखाएगी, कोर्ट कचहरी जाएगी। कोई कायदा-कानून नहीं बचा क्या दुनिया में?

रुक्की आधी रात को चुपचाप निकल गई अँधेरे रास्ते पर। डिबरियाँ, लालटेन और इक्का-दुक्का गैस के डंडे बुझाकर लोग सो गए थे। दूर से सियारों की हुआ-हुआ आवाज सुनसान रात को भयानक बना रही थी, हर आहट पर ज्यों मौत पंजे खोले खड़ी हो!

सुबह सूर्य उगने से पहले सोया गाँव देवी के मंदिर में इकट्ठा हो जाएगा, और रुक्की के बेटे की तलाश शुरू हो जाएगी...।

सूर्य उगने से पहले ही वह पुलिस-चौकी पर पहुँच गई थी। लाल छत वाली पक्की ईटों का लंबोतरा-सा मकान, उसने पहले देखा कहाँ है? पूछ-पूछकर आ गई। मकान के सामने खुले बरामदे में दो खाटें बिछी थीं जिन पर दो व्यक्ति सोए खाँ-खाँ खर्राटे भर रहे थे। रुक्की दालान के बाहर दीवार से पीठ टिकाकर सुस्ताने बैठ गई। ये आदमी जग जाए तो रुक्की अपनी फरियाद सुनाएगी।

सुबह की ठंडी हवा ने तन को मुलायम थपकियाँ दीं और इंतजार में बैठी रुक्की की आँख लग गई। नींद में उसे कमर में डंडे की कौंच महसूस हुई, तभी वह हड़बड़ाकर जाग गई।

"ऐ कौन है तू, इधर क्यों सोई पड़ी है?"

आँखें मलते रुक्की ने ओढ़नी सम्हाली, बच्चे को बाँहों में उठाया और खड़ी हो गई, "आप हवलदार साहब हो न?"

"तेरी आँखों में क्या चर्बी चढ़ी है जो पहचानती नहीं?"

"नहीं हुजूर, छिमा करना, मैंने पहचाना नहीं। वो वर्दी नहीं पहनी है न?"

तब हवलदार साहब को शायद पहली बार मालूम पड़ा कि वह बनियान और चड्डी में ही घूम रहा है।

"ठीक है, ठीक है, बोल, क्या बात है?" हवलदार झेंपने की बजाय कुछ ज्यादा ही अकड़ से बोला।

"हुजूर, फरियाद करने आई हूँ।"

"किससे? कैसी फरियाद? कोई मर-मुर गया? कहीं कत्ल-वत्ल हो गया?"

"नहीं, हुजूर, वो रपट लिखानी है।"

हवलदार शायद और बातें पूछता, तभी भीतर से पुलिस की ढीली-ढीली वर्दी पहने दूसरा व्यक्ति बाहर आ गया।

"रपट लिखाने आई है, इसे अंदर ले चलो। मैं बावड़ी पर स्नान करके आता हूँ।"

भीतर एक उम्र की मार खाई रंग-उड़ी मेज पर कुछ बहीखाते जैसे रखे हुए थे। पुलिसवाला कुर्सी पर बैठ गया और उसे चरमराती-सी बैंच पर बैठने का इशारा किया।

"आप ही लिखोगे रपट?" रुक्की ने नीम-अँधेरे सूने कमरे में खुद को अकेली पाकर थोड़ा घबराकर पूछा।

"नहीं तो क्या आपका बाप लिखेगा?" पुलिसवाला उसकी चोली पर नजर गड़ाए मजाक के मूड में आ गया।

रुक्की ने बच्चे को कंधे से लगाकर ज्यों आड़ कर दी और जल्दी-जल्दी रिपोर्ट लिखानी शुरू की, "हुजूर, मैं राधेश्याम की जोरू रुकमिनी हूँ। ब्याह के पाँच साल बाद मेरा यह छोरा हुआ है। मैं इसे महंत की असीस दिलाने मंदिर ले गई तो महंत ने कहा...।"

"आहिस्ता बोल, क्या चपर-चपर जबान चला रही है...।" पुलिसवाला उसे बीच-बीच में टोकता कुछ-कुछ लिखता गया और हर वाक्य के बाद सवाल पूछता रहा, "महंत नहीं, महंत जी कहो। क्या कहा महंत जी ने? ओ-हो-हो-हो!" अचानक उसे हँसी का दौरा-सा पड़ गया और वह उठकर रुक्की के पास आ गया, "दस बेटे जनेगी कहाँ? ओ-हो-हो-हो! गलत नहीं कहा। मैं तो कहूँ, बीस छोरे जनेगी तू... ऐसी कसी-तनी देह है तेरी।" बात करते वह रुक्की से छेड़छाड़ करने लगा।

रुक्की सहमी-सी कमरे के बाहर देखने लगी, वह दूसरा पुलिसिया जाने कहाँ मर गया!

"हुजूर! वह महंत को जेहल में डाल दो, हथकड़ी लगा दो। छँटा बदमाश है वह...।"

"तेरे साथ कुछ बदसलूकी की?"

"हुजूर, वह लाजो थी न, उसने...।"

"उसकी बात छोड़, तू अपनी बात कह... तेरे पास क्या सबूत है उसकी बदमाशी का? यह छोरा...?"

पुलसिया इतना पास आ गया कि उसकी हाँफती बदबूदार साँसें वह चेहरे पर महसूस करने लगी थी। वह छटपटाकर दरवाजे की ओर बढ़ी, और छीना-झपटी में दहलीज पर ठोकर खाते-खाते संभली। तभी उसने देखा, बाहर से पहले वाला हवलदार कंधे पर गमछा डाले भीतर आ रहा है।

"हुजूर, आप इसे बरज दीजिए, मेरे साथ बदसलूकी कर रहा है।" रुक्की ने शिकायत करनी चाही।

हवलदार ने आँखें तरेरकर पुलिस को देखा, "क्यों बे, बदतमीजी कर रहा है...।"

रुक्की ने हैरानी से देखा, हवलदार पुलिस वाले की ओर एक आँख दबाकर होठों में मुस्कराया था। अकेले-अकेले।

"रिपोर्ट लिखवा दी?" वह रुक्की की तरफ मुड़ा।

"हाँ-हुजूर," रुक्की सहमी-सहमी-सी खड़ी रही।

"अभी तो पूरी नहीं हुई हवलदार साहब, अभी तो बात शुरू ही की है।" पुलिसिया पीले दाँतों के ऊपर टिके काले मसूड़े दिखाते बोला।

"नहीं, बस इतनी-सी बात है।" रुक्की को सारा कमरा जेल की कालकोठरी-सा लग रहा था। उसका दम घुटने लगा था और वह वहाँ से जल्दी भाग जाना चाहती थी।

"बैठ जाओ... क्या नाम बताया... रुकमिनी। अभी दरोगा साहब आएँगे, वे तफशीश करेंगे...।"

"बच्चे को जरा बाहर ले जाऊँ। कपड़ा गीला कर दिया है...।" बच्चे का बहाना बनाकर वह बाहर बैठ गई।

बाहर दालान में हथकड़ी पहने दो आदमी आपस में बतिया रहे थे। उनके चेहरे पर भय या सहम जैसी कोई छाप नहीं थी, ज्यों सैर करते पुलिस चौकी तक निकल आए हों, बल्कि रुक्की को देखकर वे भी कुछ ऊटपटाँग बोल मारने लगे...।

"चाँदी है साले पुलसियों की यहाँ...।"

"हाँ यार, एक तरफ थैलियाँ, साबुत-की-साबुत भेड़-बकरियाँ, और दूसरी तरफ ये तर माल...।"

रुक्की का मन हुआ, मुँह नोच ले इन चोर-उचक्कों का। पता नहीं, किसका गला काटकर आए हैं! ऊपर से हिम्मत तो देखो, पुलसियों से भी दो कदम आगे। वाह रे वाह! सूप तो सूप, मुई छलनी भी अकड़े, जिसमें बहत्तर छेद! एक बार उसने उन्हें छिड़क भी दिया, "क्यों भैया, तुम्हारे कोई माँ-बहन नहीं घर में?"

उनका जवाब भी हाजिर था, "माँ-बहन तो हैं, पर तेरी जैसी छम्मक-छल्लो लुगाई नहीं...।"

रुक्की धूप में बैठी रही, उन उच्चकों की तरफ पीठ करके। कहें जो भी जी में आए। वह चुप बैठी रही। इनसे बतियाना तो कीचड़ में पाँव डालना है।

घंटे भर में दरोगा आ गया। वर्दी में चुस्त, हाथ में छोटा-सा चमकदार डंडा। मुँह पर नुकीली मूँछें! पान चुभलाते उसने इशारे से पुलसियों से पूछा, "यह कौन है?"

दोनों पुलसिए सलाम ठोंककर खड़े हो गए, ताड़ के ताड़ की तरह सीधे।

रुक्की सामने आई, "हुजूर, फरियाद लेकर आई हूँ।"

थानेदार साहब ने लिखी रिपोर्ट पढ़ी।

"कोई गवाह है तुम्हारा?"

"हुजूर, सारे गाँव को मालूम है।"

"वो तो ठीक है, पर महंत की बड़ी ताकत है, बिना सबूत उस पर इल्जाम लगाने का क्या मतलब समझती हो?"

रुक्की ने दो-चार नाम गिनाए - हरि काका, बुधिया, काकी, जमुना, इनसे पूछा जाए।

थानेदार ने गाँव में आदमी दौड़ाए - हरि काका, बुधिया, काकी को बुलाने के लिए।

रुक्की इंतजार करते ऊब गई, पर एक आस बराबर जगी रही - हरि काका, बुधिया, जमुना! मर्द ही उसे बेसहारा छोड़कर भाग निकला। वे लोग तो उसके साथ हैं!

लेकिन हरि काका, बुधिया, जमुना यहाँ तक कि काकी ने भी थानेदार साहब से कहा कि उन्हें कुछ भी नहीं मालूम। उनके सामने तो महंत जी ने कुछ नहीं कहा।

"मगर काका, तुम सब लोग तो जानते हो, महंत ने तो खुद ही गाँव भर में बच्चे की बलि की बात कही है...।"

"हमें कुछ नहीं मालूम साहब!" जमुना सिंह तो यहाँ तक बोला कि राधे के घर से चले जाने की वजह से रुक्की का माथा खराब हो गया है। महंत जी तो योगी-महात्मा हैं...।

रुक्की खून का घूँट पीकर रह गई। उसके भीतर जोरदार रुलाई फूटी! ये उसके अपने सगे, ये भी उसे मँझधार में छोड़कर चले गए? अपनी जान इतनी प्यारी हो गई कि धर्म-अधर्म भी भूल गया? रुक्की ने कमजोर पड़ता मन पक्का कर लिया। वह अकेली लड़ेगी, बिल्कुल अकेली। हाँ, वह न्याय के लिए लड़ेगी। मरना होगा तो इनसाफ की देहरी पर सिर फोड़कर मरेगी।

दरोगा ने उसे रात भर रोके रखने की हिदायत दी, "महंत का नाम ले रही है यह लुगाई। बात की पूरी तहकीकात करनी होगी। इसे कुछ खिलाओ-पिलाओ रामदीन...।"

रुक्की का जी बैठ गया। हाथ-पैर-सुन्न! रात-भर वहाँ अकेली? शेर की माँद में बकरी क्या खैर मनाएगी?

बच्चा नन्हीं टाँगें हिला-हिलाकर नींद में किलक रहा था। रुक्की का कलेजा बुक्का फाड़कर बाहर आने को हो रहा था। राधे इस नन्हीं जान को देखकर निहाल हो गया था। रातों को इसे जगकर देखता। बच्चा नींद में होंठ हिलाता तो कहता - 'परियाँ सपनों में आई है मेरे राजकुमार के।' अब इसे भिखारी बनाकर कहाँ चला गया बेदर्द? वह साथ रहता तो रुक्की इस तरह इन कुत्तों के मुँह की हड्डी बन जाती?

रामदीन और लच्छू, यही उन दो पुलसियों के नाम थे; उसके लिए खाना ले आए। रामदीन अलग से दोने में चार लड्डू लेकर आया। लच्छू की तो जैसे माँ लगती थी रुक्की, बार-बार पूछता था - 'आराम से तो हो रुकमिनी? उधर मच्छर तो नहीं लग रहा रुकमिनी? अपने दरोगा साहब की बड़ी ताकत है, उन्हें तू जरा खुश कर दे, बस! बाकी समझ ले कि न्याय आपे चलकर तेरे दरवाजे पर खड़ा हो जाएगा।'

वह खाना क्या खाती, भय के मारे प्राण हलक में आ रहे थे। रात घिरते ही वे शैतान उसे निगल जाएँगे और इस छोरे को लेकर वह क्या करेगी? दरोगा तो इनका भी बाप लगता है। उससे क्या कहेगी?

नहीं, इन कसाइयों से वह पार न पाएगी। रुक्की को याद आया - चाची उसकी सेहत देखकर बोल मारती। माँ से कहती - 'तेरी बेटी को पहलवान है काकी! चार मर्दों को पटकने का दम है।' माँ गर्व से हँसकर कहती - 'हाँ', बहन, खावा-लजावा नहीं है, खाया-पिया दिखता है।' पर रुक्की की पहलवानी यहाँ किस काम की, इन दो-दो मुस्टंडों के सामने? उसने सोचा, जोर-जब्बर नहीं चलेगा इधर...।

रुक्की को दिमाग से ही काम लेना पड़ेगा। रुक्की रामदीन से हँसकर बतियाने लगी। रामदीन के फूहड़ मजाकों को दाँत भींचकर सहती भी रही। जब उसने कंधे पर हाथ रखकर पूछा कि छोरे का असली बाप कौन है, तो वह नखरा दिखाकर थोड़ा पीछे हटकर हँसी भी। तभी तो उसे गच्चा देकर वह दिशा-मैदान के बहाने बाहर आ सकी। लच्छू ने 'दूर मत जाना' कहकर जरूर टोका, पर वह 'नहीं, पास ही हूँ, तुम जरा खयाल रखना...' कहकर पीपल के झाड़ के पीछे छिप गई। दो-एक मिनट बाद तने की ओट होकर उसने जब दोनों को चिलम का सुट्टा लगाते देखा तो वह दबे पाँव कटे हुए धान की ढेरियों और झाड़-झरबेरियों से होती हुई भाग निकली, और रात-भर-थकान से चिथड़ा-चिथड़ा हुआ जिस्म लिए भागती रही।

अचानक रुक्की को महसूस हुआ कि झोपड़ी की छत उस पर गिर रही है। हजारों हाथ ज्यों उसे नोचने को बढ़ आए हों, दबाव और घुटन से उसकी चीख निकल गई।

'क्या हुआ?' शोर सुनकर दूसरे कमरे में सोई स्त्री जाग पड़ी।

"कोई आदमी...।" वह हकलाई।

"फिटे मुँह मरदुए...।" कमरे में डोलती छाया देखकर वह बड़बड़ाती पास आई, "तू डर गई है शायद सपने में।" रुक्की ने उसे नरम आवाज में कहा, 'सो जा। मैं दिया बालकर सिरहाने धर दूँगी।' स्त्री अपना बिछौना सरकाकर पास लेट गई। सुबह धुँधलका छँटते ही उसने रुक्की को जगाया, "उठो, हाथ-मुँह धोकर मुँह में कुछ डाल लो। दो रोटी पोकर देती हूँ, इन्हें साथ ले चलो, और यहाँ से चली जाओ।"

रुक्की खामोश उसे देखती रही।

कपड़े में लपेटकर रोटियाँ उसने बाँध दीं। बाटी में थोड़ा-सा दूध लाकर बच्चे को पिलाया।

"अब जाओ, शाम तक नेडे के गाँव तक पहुँच जाओगी। वहाँ सरदार अतर सिंह की कोठी है। उधर जाओ, कुछ काम-धाम देगा। खाता-पीता आदमी है, धर्म-कर्म में विश्वास है। सुना है, सुच्चा आदमी है।" कंधे पर हाथ रखकर वह स्नेह से बोली, "भगवान और इनसान दोनों ने तेरे साथ बेइनसाफी की है। तू घर से निकल पड़ी है, अकेली औरत की हर तरफ से मार है। मैं नहीं जानती, तुझे न्याय मिलेगा या नहीं, पर गिद्ध-चीलें मुझे नोचेंगे जरूर। मर्द जात पर मेरा भरोसा नहीं है, पर हो सकता है, इस छोरे की किस्मत से तुझे कोई भगवान मिल जाए।"

सरदार का घर पक्की ईंटों की हवेलीनुमा कोठी थी। बड़ी हिम्मत बाँधकर रुक्की ने दरवाजे का भारी-सा गोल कुंडा खटखटाया। दस-बारह वर्ष के लड़के ने दरवाजा खोला।

"किससे काम है?"

"सरदार अतर सिंह जी यहाँ रहते हैं?"

रुक्की लड़के के इशारे पर भीतर चली गई। साफ-धुले आँगन में मंजे पर दरी बिछाकर बैठी सरदारनी सरौते से सुपारी काट रही थी। सरदार आरामकुर्सी पर टेक लगाकर बैठा अखबार पढ़ रहा था। रुक्की बच्चे को लेकर पैरों के पास धरती पर बैठ गई।

सरदार पकी उम्र का रौबदार आदमी था। उसकी दाढ़ी आधे से ज्यादा सफेद भी जो करीने से मोड़कर चेहरे पर जमा दी गई है। सरदारनी ने उसे एक-दो बार देखा, एकाध

बात की और विशेष रुचि न दिखाकर तन्मयता से सरौता चलाने लगी। सरदार ने परीक्षक की दृष्टि डाली और पूछा, "किसलिए आई है?"

"कौन-सा काम करोगी?"

"रोटी-पानू करूँगी, झाड़-बुहार करूँगी, कपड़े-लत्ते धोऊँगी। और हाँ..." रुक्की ने कुछ रुककर धरती ताकते हुए कहा, "कोई गलत काम नहीं करूँगी।" सरदार ने एक्स-रे मशीन जारी रखी, "गलत काम मतलब?"

रुक्की बेलाग लहजे में बोली, "आपकी बड़ी तारीफ सुनी है, इसी से साफ बात कहती हूँ। मैं वह काम नहीं करूँगी जो मर्द लोग औरत को मजबूर समझकर कराते हैं।"

सरदार स्तंभित, अचंभित उसकी तरफ देखने लगता है। मुँह में सुपारी चुभलाता मूँछों में हल्का-सा मुस्कराया भी शायद।

"मैं घर से भाग आई हूँ, यह भी सुन लो सरदार जी। यों घर में नाज-पानी की कमी नहीं थी, पर वहाँ गाँव वाले मेरा बच्चा ले रहे थे, इसी से!"

"तुम्हारा बच्चा क्यों?" इस पर सरदारनी की रुचि जाग उठी।

"वह दूसरी बात है। आप कहो, काम मिलेगा कि नहीं? जान लगाकर काम करूँगी।"

सरदारनी प्रभावित हुई। रुक्की को काम मिल गया। रुक्की जब्बर औरत मालूम पड़ती है। सेहत अच्छी है, खेत-मजूरी भी कर सकती है।

आगे की कहानी यों है कि रुक्की को काम मिल गया। महीना-भर उसने काम किया, जी-जान से। खाना बनाया, झाड़-बुहार की, खेतों पर गोड़ाई-निराई भी की और सरदारनी के पैरों में मालिश भी करती रही। कभी उसके सिर में कर्बुल-कर्बुल होती तो दो टटोले भी देती सिर में। सरदार ने उसकी दुखगाथा सुनी और कहा कि वह उसे किसी बड़े वकील से मिलाएगा। महंत को सजा दिलाएगा और रुक्की के बच्चे को, जिसे वे कन्हैया कहने लगे थे, पूरा न्याय दिलाया जाएगा।

सरदारनी अश्वस्त हो गई, रुक्की सचमुच हीरा है। रुक्की सरदार-सरदारनी को चाचा-चाची कहकर बुलाने लगी और ऐसा महसूस हुआ कि रुक्की के दिन फिर गए, उसे भगवान मिल गया।

तभी एक दिन अचानक शहर से तार आया - 'सरदारनी के पिता बीमार हैं, जल्दी चली आओ।'

सरदारनी घर-बार रुक्की को सौंप शहर चली गई।

रुक्की खाना बनाती रही, चाचा को खिलाती रही, खाते वक्त पंखा झलती रही। आखिर वह उसका चाचा बन गया था।

एक दिन सरदार को सर्दी हो गई, बुखार और जबरदस्त कँपकँपी छूटने लगी। रुक्की ने पैर में मालिश की, छोकरे को डॉक्टर के पास भेज दिया, बल्कि एक आदमी शहर दौड़ाया - 'चाची, घर लौटो, चाचा बीमार हो गए हैं', कहने के लिए। दुपहर में वह चाचा का दुखता माथा दबा रही थी कि वह आँय-बाँय बकने लगा। रुक्की की बाँह पकड़ ली। रुक्की को लगा, चाचा को सरसाम हो गया है। वह थर-थर काँपने लगा था।

"बहुत दर्द हो रहा चाचा?" रुक्की रुआँसी हो गई।

सरदार की जुबान भी हकलाने लगी थी, "न... न... तुम... इधर आओ..."

"पानी दूँ?" रुक्की पानी लाने गई कि सरदार ने मतलब की बात कही, "बच्चे को उधर लिटा दो और मेरे पास आओ।"

रुक्की आसमान से धरती पर गिर पड़ी। यह देवता पुरुष? यह धर्मी-कर्मी सत्संगी, जिसे वह चाचा कहती है, औरत को अकेली देखकर अचानक राक्षस बन गया?

"देखो सरदार साहब, तुम अपना ईमान खराब मत करो। मैंने तुम्हें पहले दिन ही कहा था...।"

सरदार ने बच्चे को दाएँ हाथ से उठाया और बाएँ हाथ से रुक्की को अपनी तरफ खींच लिया।

"ज्यादा चूँ-चपड़ की तो बच्चे को धरती पर पटक दूँगा, ऐसे ही मरियल पिल्ला सा है...।"

"एक मिनट रुक जाओ सरदार जी, अभी लाई।" रुक्की ने पल-भर में चेहरा मुलायम बनाकर अपनी बाँह छुड़ा ली और सधे कदमों में चौके में गई। वहाँ से मीट काटने वाला छुरा लाकर सरदार के पीछे खड़ी हो गई।

"छोड़ दो बच्चे को, नहीं तो...।"

"नहीं तो क्या करेगी तू?" सरदार हँसा।

लेकिन रुक्की पर भूतनी सवार हो गई, पीपल वाली भूतनी। उसने सरदार की बाँह में बत्तीसों दाँत गड़ा दिए और बच्चे को उसके हाथ से खींचकर परे लुढ़का दिया। सरदार की चीख जब तक संभले वह फुर्ती से उसकी छाती पर चढ़ बैठी।

"मेरा बच्चा मरियल पिल्ला है, तुम इसे धरती पर पटक दोगे? एक तूने ही अपनी माँ का दूध पिया है मरदुए?"

बुखार में भी हट्टे-कट्टे सरदार में इतना दम था कि एक हीवार से रुक्की को दिन में तारे दिखा सकता था, पर छुरी की नोक उसके गले पर थी और जरा भी हिलने से वह उसकी साँस की नली काट सकती थी। वह कें-कें करता छटपटाने लगा।

लेकिन सहसा रुक्की ने हाथ पीछे खींच लिया। सरदार का सिर पलंग की पाटी पर मारकर अलग हट गई, "जा छोड़ दिया तुझे पापी। तेरी बीवी ने मुझ पर एतबार किया है। तुझ जैसा पाखंडी औरत को देखकर लार ही टपका सकता है, उसे बहन, बेटी नहीं मान सकता, इसका मुझे गुस्सा नहीं, पर तूने मेरे बच्चे को हाथ लगाना चाहा...।"

रुक्की ने छुरी फेंक दी थी और वह लपककर बच्चे को उठाने जा रही थी कि उसकी बात अधूरी रह गई। अब वह सरदार की कड़ी गिरफ्त में थी और छटपटा रही थी।

सरदार वहशी हो गया था, "तू मुझे मार डालती साली? सात घाट का पानी पीकर सती-सावित्री बनती है चुड़ैल? जाने किसका पाप ढो रही है बदचलन! तूने कहानी गढ़ी और समझा, मुझे बुद्धू बना दिया? तुझमें दम है मारने का? जेल-फाँसी न होती तेरी, और यह भरी जवानी तेरी सड़ती नहीं उम्र-भर जेलखाने में?"

चिथड़ा हुई देह को उठाते, बदहवास रुक्की ने रोकर बेदम हुए बच्चे को नंगी छातियों से चिपका लिया। ओढ़नी समेटते उसने अजहद नफरत से धरती पर थूका, "वो ऊपर वाला कहीं है तो जानता है कि अब तक तेरी यह कीड़े-पड़ी देह ठंडी पड़ गई होती। मैं सती-सावित्री नहीं हूँ रे पाखंडी, पर तुझ पापी कंस की आज इसी 'मरियल पिल्ले' ने ही जान बख्श दी। रुक्की आज अपने इस कोखजने के कारण ही मार खा गई।"

रुक्की की आँखों से उबलते पानी का सोता फूट पड़ा। थर्राती आवाज घर के सूने कोने-अंतरों को हिलाने लगी, "जेहल-फाँसी से तुझ जैसे धर्मी-कर्मी ही डरते हैं

शरीफजादे! मैं तो तुम्हारे कानून से डर गई। कत्ल के जुर्म में मुझे फाँसी मिल जाती तो शायद मेरा इनसाफ हो जाता रे पापी, पर मेरे इस कलयुगी कन्हैया के साथ कौन इनसाफ करता?"